नईदुनिया

संपादकीय

महिला आरक्षण और परिसीमन का दोहरा दाँव, छठ के बाद विशेष सत्र की आहट

50 फीसदी सीटें बढ़ाने की तैयारी

360 के जादुई आंकड़े से 17-18 सांसद ज्यादा समर्थन का दावा, आरक्षण कानून नहीं, राजनीतिक संस्कार का भी प्रश्न

भारतीय राजनीति में एक बार फिर महिला आरक्षण का मुद्दा नई हलचल लेकर लौटा है। महिला आरक्षण और परिसीमन विधेयक पारित कराने के लिए सरकार संसद का विशेष सत्र बुला सकती है। चर्चा है कि छठ के तुरंत बाद यह सत्र हो सकता है। सरकार दो-तिहाई बहुमत जुटाने का दावा कर रही है। अप्रैल में जो सरकार 298 मतों पर अटक गई थी, अब उसे 360 के जरूरी आंकड़े से 17-18 सांसद अधिक समर्थन मिलने की उम्मीद है।

यह अंकगणित दिलचस्प है। लोकसभा में वर्तमान संख्या के आधार पर दो-तिहाई बहुमत का आंकड़ा 360 है। अप्रैल में 534 सदस्यों में से 298 ने विधेयक के पक्ष में और 234 ने विरोध में मतदान किया था। अब कुछ विपक्षी दलों के सांसदों के पाला बदलने और मतदान के दिन अनुपस्थित रहने की चर्चाएं हैं। सरकार को उम्मीद है कि इससे बहुमत हासिल करना आसान होगा। लोकसभा में महिलाओं की संख्या आज भी 15 प्रतिशत से कम है, जबकि आबादी में उनकी हिस्सेदारी लगभग आधी है। 33 प्रतिशत आरक्षण निश्चित रूप से ऐतिहासिक सुधार होगा, लेकिन सवाल केवल सीटों का नहीं, वास्तविक नेतृत्व का भी है। पंचायतों में आरक्षण के बाद प्रधानपति और सरपंचपति जैसी समानांतर सत्ता खड़ी हो गई। क्या लोकसभा में भी सांसद पति की परंपरा विकसित नहीं होगी? जब तक राजनीतिक दलों में आंतरिक लोकतंत्र नहीं होगा और टिकट वितरण में परिवारवाद तथा पूंजी का प्रभाव बना रहेगा, तब तक आरक्षित सीटें भी पुरुष सत्ता का विस्तार बन सकती हैं। आरक्षण सीट देता है, नेतृत्व नहीं। उसके लिए राजनीतिक संस्कार बदलने होंगे। लोकसभा की सीटें 543 से बढ़ाकर 800 से अधिक करने की तैयारी भी इस प्रस्ताव का महत्वपूर्ण हिस्सा है। सरकार इसे जनसंख्या और प्रतिनिधित्व के संतुलन के लिए जरूरी बता सकती है, लेकिन परिसीमन का सवाल संघीय व्यवस्था से जुड़ा है। दक्षिण के तमिलनाडु, केरल, कर्नाटक और आंध्र प्रदेश जैसे राज्यों ने दशकों तक परिवार नियोजन को गंभीरता से अपनाया और जनसंख्या वृद्धि नियंत्रित की। यदि परिसीमन केवल जनसंख्या के आधार पर हुआ तो इन राज्यों का संसद में प्रतिनिधित्व अपेक्षाकृत घट सकता है, जबकि अधिक जनसंख्या वाले राज्यों की हिस्सेदारी बढ़ेगी। यह जनसंख्या नियंत्रण को प्रोत्साहित करने के बजाय दंडित करने जैसा होगा। इससे संघीय भावना में असंतुलन पैदा हो सकता है। सवाल यह भी है कि क्या अधिक सांसद होने से लोकतंत्र मजबूत होगा या अधिक जवाबदेह प्रतिनिधियों से?

इतने बड़े संवैधानिक बदलाव को तकनीकी प्रक्रियाओं और राजनीतिक जोड़-तोड़ के सहारे पारित कराना उचित नहीं होगा। महिला आरक्षण आधी आबादी के भविष्य से जुड़ा विषय है। इसके लिए सर्वदलीय सहमति, व्यापक चर्चा और सामाजिक न्याय का संतुलन जरूरी है। राजनीतिक दलों की चिंता भी समझी जा सकती है। महिला मतदाता अब चुनावों में निर्णायक भूमिका निभा रही हैं। इसलिए कोई भी दल महिला आरक्षण का खुला विरोध नहीं करना चाहता, लेकिन पर्दे के पीछे सभी को अपनी राजनीतिक जमीन और सीटों की चिंता है। कौन सी सीट आरक्षित होगी और किसका राजनीतिक प्रभाव घटेगा, यही असली गणित है।

सरकार को तीन महत्वपूर्ण सवालों का स्पष्ट जवाब देना चाहिए। पहला, क्या महिला आरक्षण में ओबीसी, एससी और एसटी महिलाओं के लिए उप-आरक्षण का प्रावधान होगा? दूसरा, परिसीमन का आधार केवल जनसंख्या होगा या जनसंख्या नियंत्रण, विकास और संघीय संतुलन को भी महत्व मिलेगा? तीसरा, 800 से अधिक सांसदों के बैठने, चर्चा करने और संसदीय कामकाज के लिए नई व्यवस्था पर होने वाले खर्च का औचित्य क्या होगा? महिला आरक्षण लागू होना चाहिए, लेकिन जल्दबाजी और राजनीतिक लाभ के लिए नहीं, बल्कि व्यापक सहमति और दूरदर्शिता के साथ। सीटें बढ़ाने से संसद बड़ी जरूर दिखेगी, लेकिन लोकतंत्र तभी बड़ा होगा जब उसमें प्रतिनिधित्व के साथ समानता, जवाबदेही और न्याय भी बढ़ेगा।

आजकल

कचरे पर करोड़ों की बारिश, फिर भी भोपाल नहीं चमका

राजधानी भोपाल की स्वच्छता व्यवस्था आज गंभीर विरोधाभास का उदाहरण बन गई है। एक ओर नगर निगम का 216 करोड़ रुपये का स्वच्छता बजट, 40 करोड़ रुपये से अधिक का स्वच्छता राजस्व, प्रतिदिन 800 टन कचरा उठाने के लिए 48 करोड़ रुपये का ठेका और आदमपुर खंती के पुराने कचरे के निपटान के लिए 53 करोड़ रुपये का प्रावधान है, वहीं दूसरी ओर छोटा दशहरा मैदान जैसे इलाकों में कचरे के ढेर और स्वच्छता रैंकिंग में लगातार गिरावट शहर की वास्तविक स्थिति बयां कर रहे हैं।

भानपुर खंती बंद होने के बाद 2017-18 में आदमपुर में 70 एकड़ भूमि पर आधुनिक कचरा प्रबंधन और वेस्ट टू एनर्जी प्लांट की परिकल्पना की गई थी। गीले कचरे से बायो सीएनजी और सूखे कचरे से बिजली बनाने की योजना थी, लेकिन 2018 से 2026 के बीच छह बार टेंडर निकालने के बावजूद कोई कंपनी आगे नहीं आई। नतीजा यह कि योजनाएं कागजों और घोषणाओं तक सीमित रह गईं, जबकि कचरा खुले में जमा होता रहा। समस्या केवल संसाधनों की नहीं, प्राथमिकताओं और प्रबंधन की भी है। दीवारों की पेंटिंग, सौंदर्यीकरण और प्रचार पर खर्च के बावजूद रात की सफाई, नालियों की सफाई और घर-घर कचरा संग्रहण की गुणवत्ता पर सवाल बने हुए हैं। कचरा उठाना ही स्वच्छता नहीं, उसका वैज्ञानिक प्रसंस्करण भी जरूरी है। जनभागीदारी का अंतर भी चिंताजनक है। सार्वजनिक सफाई कार्यों में इंदौर के 7446 नागरिकों की सक्रिय भागीदारी के मुकाबले भोपाल में यह संख्या केवल 2805 रही। भोपाल के लगभग 70 प्रतिशत घरों से मिश्रित कचरा मिलना बताता है कि स्रोत पर गीले और सूखे कचरे का पृथक्करण अब भी बड़ी चुनौती है।

भोपाल को टेंडर प्रक्रिया सरल बनानी होगी, आधुनिक कंपनियों को आकर्षित करना होगा और वार्ड स्तर पर जवाबदेही तय करनी होगी। कचरा संग्रहण की लाइव ट्रैकिंग और नागरिकों को प्रोत्साहन से जोड़ना भी जरूरी है। आखिर स्वच्छता केवल बजट और सरकारी योजनाओं से नहीं, नागरिकों की आदतों और सहभागिता से आती है। भोपाल को कचरे के ढेर पर नहीं, नागरिकों के विवेक और जिम्मेदारी पर निवेश करना होगा।

कैंसर की दवाओं को सस्ती बनाने की प्रक्रिया और मरीजों को प्राथमिकता



जगत प्रकाश नड्डा



'कैंसर' शब्द पल भर में ही किसी परिवार की जिंदगी बदल देता है। इस बीमारी की पहचान होने के बाद, मरीजों व उनके परिजनों को इलाज, आर्थिक मामलों और भविष्य से जुड़े कई कठिन निर्णय लेने पड़ते हैं। कई परिवारों के लिए तो दवाओं का खर्च एक ऐसे समय में अतिरिक्त बोझ बन जाता है, जब सारे संसाधन मरीज को स्वस्थ करने में लगाए जाने चाहिए। एक करुणामयी स्वास्थ्य प्रणाली को सिर्फ बीमारी ही नहीं, बल्कि उससे पैदा होने वाली आर्थिक तंगी का भी समाधान निकालना चाहिए।

इसी पहलू को ध्यान में रखते हुए, भारत सरकार ने कैंसर के इलाज को और अधिक किफायती बनाने की दिशा में एक अहम कदम उठाकर 137 चिन्हित गैर-अनुसूचित कैंसर-रोधी दवाओं के 'ट्रेड मार्जिन' को तर्कसंगत बना दिया है। इस उपाय के तहत, राष्ट्रीय औषध मूल्य निर्धारण प्राधिकरण (एनपीपीए) ने 'ट्रेड मार्जिन' को अधिकतम खुदरा मूल्य (एमआरपी) के अधिकतम 30 प्रतिशत तक सीमित कर दिया है और ये संशोधित कीमतें 9 नवंबर, 2026 से लागू हो गई हैं। उद्देश्य बिल्कुल स्पष्ट है: मरीज द्वारा चुकायी जाने वाली कीमत में अत्यधिक 'मार्क-अप' के बजाय वितरण संबंधी मार्जिन का उचित व तर्कसंगत समावेश होना चाहिए।

इस कदम के नतीजे दवा की दुकानों पर साफ नजर आने लगे हैं। कुल 80 से अधिक दवा कंपनियों ने 137 में से 121 दवाओं से जुड़े 1,366 उत्पादों के लिए संशोधित एमआरपी की सूचना दी है। इनमें से प्रत्येक 5 में से 4 से अधिक उत्पादों की कीमतें कम हो गई हैं। इन दवाओं में से लगभग आधे की कीमतों में 50 प्रतिशत से अधिक की कमी आई है और कुछ दवाएं तो अब पहले की तुलना में 96 प्रतिशत से भी कम कीमत पर मिल रही हैं। कीमोथेरेपी के कई दौर का खर्च उठाने वाले परिवार के लिए, इस कदम से इलाज के मासिक बिलों में काफी अंतर आ जाता है। पिछले वर्ष की खपत के आधार पर, मरीजों एवं उनके परिवारों को प्रत्येक वर्ष लगभग 3,500 करोड़ रुपये की बचत होने की उम्मीद है। यह वो रकम है जो अत्यधिक 'ट्रेड मार्जिन' में खप जाने के बजाय उनके घरेलू बजट में ही बनी रहेगी।

यह निर्णय पिछले अनुभवों के आधार पर लिया गया है। वर्ष 2019 में, एनपीपीए ने 'ट्रेड मार्जिन के युक्तिकरण' (टीएमआर) की कवायद के तहत एक प्रायोगिक कार्यक्रम चलाया था जिसमें कैंसर की गैर-अनुसूचित श्रेणी की 42 दवाएं शामिल थीं। इससे 526 ब्रांडों की एमआरपी में 90 प्रतिशत तक की कमी आई थी। अब इसी प्रक्रिया को 137 दवाओं की एक बड़ी सूची तक बढ़ाया जा रहा है। इन दवाओं की पहचान एक विशेषज्ञ समिति की सिफारिशों के आधार पर की गई है। इस विशेषज्ञ समिति में प्रमुख कैंसर विशेषज्ञ (ऑन्कोलॉजिस्ट), चिकित्सा विशेषज्ञ, अस्पताल विशेषज्ञ और सरकारी प्रतिनिधि शामिल थे। इस सूची को समय-समय पर अद्यतन किया जाता रहेगा।

एक न्यायसंगत स्वास्थ्य व्यवस्था में दवाओं का किफायती होना जरूरी है। खासकर, भारत जैसे देश में। बाजार में उपलब्ध होने के बावजूद अगर किसी दवा को बहुत महंगी होने के कारण खरीदना संभव न हो पाए, तो वह मरीज के किसी काम की नहीं है। एनपीपीए 'आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955' के तहत जारी 'औषधि (मूल्य नियंत्रण) आदेश (डीपीसीओ), 2013' के जरिए दवाओं की कीमतों को नियंत्रित करता है। जहां वह 'आवश्यक दवाओं की राष्ट्रीय सूची' में शामिल जरूरी दवाओं की अधिकतम कीमतें (सीलिंग प्राइस) निर्धारित करता है, वहीं गैर-अनुसूचित दवाओं की कीमतों में हर वर्ष होने वाली बढ़ोतरी पर नजर भी रखता है। हालांकि, बाजार के आंकड़ों के विश्लेषण से पता चला कि कुछ गैर-अनुसूचित दवाओं के मामले में फैक्ट्री से निकलने वाली कीमत और ग्राहक द्वारा चुकाई गई कीमत के बीच का अंतर बहुत अधिक था। इनमें कैंसर की वैसी दवाएं भी शामिल थीं, जिनकी खुराकें इलाज के दौरान अक्सर कई बार और बार-बार लेने की जरूरत पड़ती है। व्यापार श्रृंखला (ट्रेड चैनल) में बहुत अधिक मार्जिन और इलाज के भारी खर्च को देखते हुए, सरकार ने इस विसंगति को दूर करने के लिए कदम उठाया है और मार्जिन को एमआरपी के 30 प्रतिशत तक सीमित कर दिया है।

सरकार इस पहल को प्रभावी ढंग से लागू करने पर भी ध्यान दे रही है ताकि मरीजों और उनके परिजनों को टीएमआर का पूरा लाभ मिल सके। निर्माताओं को यह सुनिश्चित करना होगा कि संशोधित कीमतें हर फार्मेसी और अस्पताल तक पहुंचें। साथ ही, सभी फार्मेसियों और अस्पतालों को इन कीमतों को पारदर्शी तरीके से प्रदर्शित करना होगा और इनका सख्ती से पालन करना होगा। मरीज और उनकी देखभाल करने वाले लोग एनपीपीए की वेबसाइट और 'फार्मा सही दाम' ऐप पर इन संशोधित कीमतों को देख सकते हैं। अगर कोई फार्मेसी या अस्पताल निर्धारित कीमत से अधिक पैसे वसूलता है, तो वे इसकी शिकायत सरकार से कर सकते हैं।

टीएमआर की प्रक्रिया, प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के दूरदर्शी नेतृत्व में पिछले 12 वर्षों से चल रहे स्वास्थ्य क्षेत्र के व्यापक बदलाव का एक हिस्सा है। इस सरकार ने स्वास्थ्य को केवल कुछ चुनिंदा लोगों के विशेषाधिकार के रूप में नहीं, बल्कि गरिमा, उत्पादकता और सामाजिक न्याय की नींव के रूप में देखा है। खासकर, समाज के सबसे गरीब तबके के लिए। 'आयुष्मान भारत' ने कमजोर परिवारों के लिए अस्पताल की सुविधाओं की सुलभता को आसान बना दिया है। सरकार ने कैंसर की रोकथाम, शुरुआती पहचान और समय पर इलाज के लिए एक बहुआयामी दृष्टिकोण अपनाया है। राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन (एनएचएम) के अंतर्गत 'गैर-संचारी रोगों की रोकथाम एवं नियंत्रण के लिए राष्ट्रीय कार्यक्रम' (एनपी-एनसीडी) के तहत, 500 से अधिक 'डे-केयर कैंसर सेंटर' स्थापित किए गए हैं ताकि कीमोथेरेपी तथा कैंसर संबंधी अन्य डे-केयर सेवाएं समय पर मिल सकें। 'आयुष्मान आरोग्य मंदिर' 30 वर्ष से अधिक आयु के नागरिकों के लिए कैंसर की आम बीमारियों की मुफ्त जांच की सुविधा प्रदान करते हैं, जिससे कैंसर का शुरुआती चरण में ही पता चल जाता है।

तृतीयक स्तर की देखभाल (टर्शियरी केयर) को मजबूत करने हेतु, टाटा मेमोरियल सेंटर ने कैंसर की व्यापक देखभाल उपलब्ध कराने के उद्देश्य से वाराणसी, विशाखापत्तनम, न्यू चंडीगढ़, गुवाहाटी, संगरूर और मुजफ्फरपुर में छह अस्पताल स्थापित किए हैं। इसके अलावा, सभी 22 नए एम्स में भी जांच, चिकित्सा और सर्जरी की सुविधाएं सहित कैंसर उपचार सेवाएं उपलब्ध कराई गई हैं।

'प्रधानमंत्री भारतीय जनऔषधि परियोजना' किफायती दामों पर अच्छी गुणवत्ता वाली जेनेरिक दवाओं की उपलब्धता सुनिश्चित करती है। सरकार ने जीवन रक्षक एवं आवश्यक दवाओं को 50 से 90 प्रतिशत तक की छूट पर उपलब्ध कराने के उद्देश्य से 'अमृत' फार्मेसियां भी स्थापित की हैं। इलाज के खर्च को और कम करने के इरादे से कैंसर, दुर्लभ बीमारियों और पुरानी बीमारियों से जुड़ी 36 जीवन रक्षक दवाओं को मूल सीमा शुल्क (बेसिक कस्टम ड्यूटी) से पूरी तरह छूट दी गई है। कैंसर-रोधी दवाओं के 'ट्रेड मार्जिन' को तर्कसंगत बनाने की प्रक्रिया किफायती दवाएं उपलब्ध कराने की इसी व्यापक प्रतिबद्धता को और आगे बढ़ाती है।

उतना ही महत्वपूर्ण बात यह है कि टीएमआर की प्रक्रिया इस तथ्य को रेखांकित करती है कि दवाओं का किफायती होना और फार्मास्यूटिकल उद्योग का स्वस्थ रूप से आगे बढ़ना, दोनों ही साथ-साथ चलने चाहिए। भारत का फार्मास्यूटिकल सेक्टर हमारी स्वास्थ्य सुरक्षा और दवाओं के वैश्विक आपूर्तिकर्ता के रूप में हमारी हैसियत में बराबर का हिस्सेदार है। यह सीमा (कैप) व्यापार श्रृंखला के मार्जिन पर लागू होती है, जबकि दवा निर्माताओं की बिक्री कीमत पर इसका कोई असर नहीं पड़ता। इस तरह, दवा निर्माताओं की वैध कमाई सुरक्षित रहती है। साथ ही अनुसंधान, विकास और नवाचार की प्रक्रिया में निवेश करते रहने की उनकी क्षमता भी बनी रहती है।

माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में, हम एक ऐसी स्वास्थ्य प्रणाली बनाने की दिशा में काम करना जारी रखेंगे जो मरीजों की सुरक्षा करे, नवाचार का सम्मान करे, जिम्मेदार उद्योग को समर्थन प्रदान करे और मानवीय गरिमा को केन्द्र में रखे। किसी देश के स्वास्थ्य तंत्र की सफलता को सिर्फ चिकित्सा तकनीक में हुई प्रगति के आधार नहीं, बल्कि वहां के लोगों को जरूरत के समय इन सुविधाओं की उपलब्धता के आधार पर ही आंका जा सकता है। स्वास्थ्य सेवा के कई पहलू होते हैं, लेकिन इसके केन्द्र में हर नागरिक के लिए किफायती, गुणवत्तापूर्ण और सुलभ स्वास्थ्य सेवाएं होनी चाहिए। इस निर्णय के जरिए, सरकार ने एक सीधे एवं सरल सिद्धांत को फिर से दोहराया है: जीवन रक्षक दवाओं पर अत्यधिक मार्जिन होने के कारण किसी भी परिवार को ऐसी आर्थिक कठिनाई का सामना नहीं करना पड़े, जिसे टाला जा सकता था।

(लेखक केन्द्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण तथा रसायन एवं उर्वरक मंत्री हैं)

सूची की शुद्धता ही लोकतंत्र की असली परीक्षा

मतदाता सूची का पुनरीक्षण केवल कागजी प्रक्रिया नहीं



मध्यप्रदेश में मतदाता सूची के विशेष संक्षिप्त पुनरीक्षण की तैयारी शुरू हो गई है। 12 नवंबर से प्रारूप सूची का प्रकाशन होगा और 4 जनवरी तक अंतिम सूची जारी की जाएगी। इस बीच देशभर में वोट चोरी के आरोपों ने राजनीतिक माहौल गर्म कर रखा है। कांग्रेस सड़कों पर है, भाजपा सफाई दे रही है और चुनाव आयोग बीच में खड़ा है। ऐसे में मध्यप्रदेश का यह पुनरीक्षण केवल एक नियमित प्रक्रिया नहीं रह गया है, बल्कि राजनीतिक अग्निपरीक्षा बन गया है। सवाल सिर्फ यह नहीं है कि किसका नाम जुड़ेगा और किसका कटेगा, सवाल यह है कि क्या लोग अपनी ही लोकतांत्रिक व्यवस्था पर भरोसा कर पाएंगे?

भारतीय लोकतंत्र की सबसे बड़ी कमजोरी और ताकत, दोनों बूथ पर ही तय होती हैं। कमजोरी इसलिए कि बूथ पर ही फर्जीवाड़ा होता है और ताकत इसलिए कि बूथ पर ही उसे रोका जा सकता है। प्रदेश में 71 हजार से ज्यादा बूथ हैं। हर बूथ पर एक सरकारी कर्मचारी बीएलओ के रूप में काम करता है, लेकिन अकेला सरकारी कर्मचारी क्या कर सकता है, जब तक राजनीतिक दलों के बूथ लेवल एजेंट और आम नागरिक साथ न दें। सच्चाई यह है कि आज भी अधिकतर लोगों को पता नहीं होता कि उनका नाम मतदाता सूची में है या नहीं। वे चुनाव के दिन ही जागते हैं और फिर शिकायत करते हैं कि नाम काट दिया गया। लोकतंत्र में यह लापरवाही बहुत महंगी पड़ती है।

इस बार की प्रक्रिया में तीन फॉर्म सबसे अहम हैं। फॉर्म छह से नया नाम जुड़ेगा, फॉर्म सात से नाम हटाने या जोड़ने पर आपत्ति दर्ज होगी और फॉर्म आठ से पता, दिव्यांगता संबंधी चिह्न तथा अन्य गलतियां सुधारी जाएंगी। 18 वर्ष की आयु पूरी करने वाले लाखों युवाओं के नाम जुड़ने हैं, लेकिन क्या वे खुद आगे आएंगे? कॉलेज में पढ़ने वाला युवा क्या अपनी जिम्मेदारी समझेगा या इंस्टाग्राम पर ही व्यस्त रहेगा? वहीं दूसरी ओर मृत मतदाताओं के नाम हटाने का काम सबसे कठिन है। कोई परिवार खुद आगे आकर यह सूचना देने में रुचि नहीं दिखाता कि उसके परिजन का नाम हटा दिया जाए। यहीं से फर्जी मतदान की गुंजाइश बनती है।

राजनीतिक दलों की भूमिका पर भी गंभीरता से विचार करना होगा। दोनों बड़े दल भाजपा और कांग्रेस अपने बीएलए नियुक्त करने का दावा कर रहे हैं, लेकिन क्या उनके पास वास्तव में 71 हजार प्रशिक्षित कार्यकर्ता हैं? क्या वे सिर्फ कागजों पर नाम देकर खानापूर्ति करेंगे या सचमुच घर-घर जाएंगे? अनुभव बताता है कि कई बूथों पर बीएलए केवल चुनाव के दिन ही दिखाई देते हैं, बाकी समय वे नदारद रहते हैं। यदि बीएलए सक्रिय नहीं हुए तो चाहे जितने आरोप लगाए जाएं, सूची शुद्ध नहीं होगी। वोट चोरी का शोर तो बहुत है, लेकिन उसे रोकने के लिए बूथ पर बैठना पड़ेगा, पसीना बहाना पड़ेगा। केवल प्रेस कॉन्फ्रेंस से सूची नहीं सुधरेगी।

एक और गंभीर सवाल पलायन का है। मध्यप्रदेश में लाखों लोग रोजगार के लिए बाहर जाते हैं। कई बार उनका नाम गांव और शहर, दोनों जगह दर्ज रहता है। इसी तरह पढ़ाई के लिए भोपाल और इंदौर आने वाले विद्यार्थियों के नाम भी एक से अधिक स्थानों पर दर्ज हो सकते हैं। यह दोहराव फर्जी मतदान की आशंका बढ़ाता है। इसे कैसे रोका जाएगा? क्या आधार से जोड़ने से समाधान होगा या स्थानीय सत्यापन ही अंतिम उपाय है? चुनाव आयोग को तकनीक के साथ-साथ मानवीय सत्यापन भी मजबूत करना चाहिए। केवल सॉफ्टवेयर से लोकतंत्र नहीं बचाया जा सकता।

नागरिकों की उदासीनता भी एक बड़ा कारण है। हम अपने बैंक खाते की हर महीने जांच करते हैं, लेकिन मतदाता सूची की पांच साल तक सुध नहीं लेते। अपनी जमीन का रिकॉर्ड देखते हैं, लेकिन अपने मताधिकार के रिकॉर्ड की परवाह नहीं करते। यही उदासीनता गड़बड़ियों को मौका देती है। यदि हर परिवार 12 नवंबर के बाद मतदाता सूची में अपने सभी सदस्यों के नाम की जांच कर ले तो आधी समस्या वहीं खत्म हो सकती है। लोकतंत्र सरकार नहीं बनाती, लोग बनाते हैं और लोगों को ही इसे बचाना होगा।

इस पुनरीक्षण का महत्व इसलिए भी बढ़ गया है, क्योंकि आने वाले समय में प्रदेश में कई बड़े चुनाव होने हैं। पंचायत से लेकर लोकसभा तक हर चुनाव की नींव यही सूची है। यदि नींव में ही कमजोरी होगी तो इमारत कैसे टिकेगी? इसलिए 4 जनवरी को जारी होने वाली अंतिम सूची सिर्फ कागजों का पुलिंदा नहीं होगी, बल्कि लोकतंत्र के प्रति भरोसे का दस्तावेज होगी। यदि उसमें गड़बड़ी रही तो हर हारने वाला दल कहेगा कि उसे हराया नहीं गया, बल्कि मतदाता सूची में ही सेंध लगाई गई। और यदि सूची शुद्ध रही तो जीतने और हारने, दोनों पक्षों को संतोष रहेगा। आरोपों से नहीं, आचरण से लोकतंत्र बचता है। वोट चोरी का हल्ला करना आसान है, लेकिन बूथ पर बैठकर सूची सुधारना कठिन है। इस बार मध्यप्रदेश के पास मौका है कि वह दिखाए कि लोकतंत्र आरोपों से नहीं, सहयोग से चलता है। हर युवा अपना नाम जुड़वाए, हर परिवार मृत मतदाताओं के नाम हटवाने में सहयोग करे, हर दल अपने बीएलए ईमानदारी से तैनात करे और हर अधिकारी बिना दबाव के काम करे। तभी 12 नवंबर से 4 जनवरी तक चलने वाला यह महायज्ञ सफल होगा और यह साबित होगा कि मतदाता सूची की शुद्धता ही लोकतंत्र की असली ताकत है।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

कचरे में छिपा खजाना अब भारत में ही रहेगा

देश में पुनर्चक्रण के जरिए महत्वपूर्ण खनिजों की आपूर्ति को बढ़ावा देने के लिए सरकार ने लिथियम आयन बैटरी के ब्लैक मास (काले चूर्ण) के निर्यात पर प्रतिबंध लगा दिया है। अभी तक इसे निर्यात के लिए मुक्त श्रेणी में रखा गया था। इस कदम का उद्देश्य महत्वपूर्ण खनिजों की घरेलू उपलब्धता सुनिश्चित करना, बैटरी रीसाइक्लिंग क्षमता को मजबूत करना और आयात पर निर्भरता कम करना है। उम्मीद है कि इससे रीसाइक्लिंग के जरिए महत्वपूर्ण खनिजों की पुनर्प्राप्ति के लिए सरकार द्वारा पिछले वर्ष सितंबर में घोषित 1,500 करोड़ रुपये की प्रोत्साहन योजना को भी बढ़ावा मिलेगा। लिथियम बैटरी से निकलने वाले काले चूर्ण के निर्यात पर प्रतिबंध की यह खबर भले ही छोटी लगे, लेकिन इसका अर्थ बहुत बड़ा है। वाणिज्य विभाग के विदेश व्यापार महानिदेशालय (डीजीएफटी) ने आईटीसी एचएस कोड 85491400 के अंतर्गत आने वाले लिथियम आयन बैटरी ब्लैक मास के निर्यात पर प्रतिबंध लगा दिया है। 10 नवंबर 2026 की अधिसूचना संख्या 49/2026-27 के माध्यम से इसकी निर्यात नीति को तत्काल प्रभाव से अगले आदेश तक मुक्त से बदलकर प्रतिबंधित कर दिया गया है। ब्लैक मास लिथियम आयन बैटरियों के पुनर्चक्रण से निकलने वाला अपशिष्ट है। बैटरी रीसाइक्लिंग के जरिए इसमें मौजूद महत्वपूर्ण खनिजों को दोबारा प्राप्त किया जा सकता है। देखा जाए तो यह काला चूर्ण ही असली सोना है।

यह काला चूर्ण क्या है? जब लिथियम आयन बैटरी खराब हो जाती है तो उसे काटकर और पीसकर जो काला पाउडर निकलता है, उसे ब्लैक मास कहते हैं। इसमें लिथियम, कोबाल्ट, निकेल और मैंगनीज जैसे महत्वपूर्ण खनिज होते हैं। अब तक भारत में इसे अपशिष्ट मानकर विदेशों में भेज दिया जाता था। विदेशी कंपनियां इससे शुद्ध खनिज निकालती थीं और फिर वही खनिज हमें महंगे दामों पर बेचती थीं। यानी हम अपना खजाना खुद बाहर भेज रहे थे। सरकार ने अब इस पर रोक लगाकर महत्वपूर्ण फैसला लिया है। यह केवल कचरा नहीं, राष्ट्रीय संपत्ति है।



इस फैसले का दूसरा पहलू आत्मनिर्भरता से जुड़ा है। भारत में लिथियम के भंडार सीमित हैं और हमें इसकी आपूर्ति के लिए आयात पर निर्भर रहना पड़ता है। इलेक्ट्रिक वाहनों के लिए बैटरी चाहिए, बैटरी के लिए लिथियम और लिथियम की आपूर्ति के लिए दूसरे देशों पर निर्भरता कम करना जरूरी है। सरकार ने इसी निर्भरता को घटाने के उद्देश्य से पुरानी बैटरियों से खनिजों की पुनर्प्राप्ति पर जोर दिया है। देश में हर साल लाखों मोबाइल, लैपटॉप और इलेक्ट्रिक वाहनों की बैटरियां खराब होती हैं। यदि उनका ब्लैक मास देश में ही रीसाइकल हो तो नए खनन की जरूरत कम होगी और पर्यावरण को भी लाभ मिलेगा। यह दोहरा फायदा है।

सरकार ने घरेलू रीसाइक्लिंग को बढ़ावा देने के लिए पहले ही इलेक्ट्रिक मोबिलिटी और एडवांस्ड केमिस्ट्री सेल बैटरी अपशिष्ट के पुनर्चक्रण हेतु 1,500 करोड़ रुपये की प्रोत्साहन योजना घोषित की थी। अब ब्लैक मास का निर्यात रोककर सरकार ने घरेलू रीसाइक्लिंग उद्योग के लिए कच्चे माल की उपलब्धता सुनिश्चित करने की दिशा में कदम उठाया है। जब कच्चा माल देश में ही रहेगा तो रीसाइक्लिंग संयंत्रों की स्थापना को बढ़ावा मिलेगा, रोजगार के अवसर पैदा होंगे और इलेक्ट्रिक वाहनों की बैटरियों की लागत घटाने में मदद मिल सकती है। यह एक ऐसी कड़ी है, जिसकी पहली शुरुआत निर्यात प्रतिबंध से हुई है।

लेकिन यहां चुनौती भी है। क्या भारत में इतनी रीसाइक्लिंग क्षमता है? क्या हमारे पास ऐसी तकनीक है, जिससे ब्लैक मास से शुद्ध लिथियम और दूसरे खनिज निकाले जा सकें? अभी भी भारत में रीसाइक्लिंग का बड़ा हिस्सा अनौपचारिक क्षेत्र में होता है। कबाड़ी स्तर पर होने वाली इस प्रक्रिया में पर्यावरणीय मानकों का पर्याप्त ध्यान नहीं रखा जाता। रासायनिक अपशिष्ट के अनुचित निपटान से प्रदूषण का खतरा बना रहता है। यदि सरकार ने केवल निर्यात पर रोक लगाई और घरेलू क्षमता नहीं बढ़ाई तो यह काला चूर्ण गोदामों में जमा होता रहेगा। इसलिए जरूरी है कि सरकार अधिकृत रीसाइक्लिंग संयंत्रों को प्रोत्साहन दे, सब्सिडी उपलब्ध कराए और आधुनिक तकनीक के हस्तांतरण में मदद करे। तभी यह फैसला सफल हो सकेगा।

एक और महत्वपूर्ण बात यह है कि यह फैसला भविष्य की अर्थव्यवस्था से जुड़ा है। दुनिया अब ऊर्जा के लिए केवल तेल पर निर्भर नहीं रहना चाहती। बैटरी तकनीक का महत्व लगातार बढ़ रहा है। जो देश बैटरी और उससे जुड़े खनिजों की आपूर्ति पर मजबूत पकड़ बनाएगा, वह वैश्विक अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा। अमेरिका, यूरोप और चीन सभी बैटरी संसाधनों और तकनीक के लिए प्रतिस्पर्धा कर रहे हैं। भारत यदि अपने अपशिष्ट को ही खजाने में बदलने में सफल होता है तो वह इस प्रतिस्पर्धा में अपनी स्थिति मजबूत कर सकता है। घरेलू रीसाइक्लिंग से आत्मनिर्भरता का यह सपना केवल पर्यावरण संरक्षण तक सीमित नहीं है, बल्कि इसका संबंध आर्थिक और सामरिक मजबूती से भी है। चीन पर निर्भरता घटेगी तो हमारी रणनीतिक स्वतंत्रता भी मजबूत होगी। लिथियम बैटरी के ब्लैक मास पर निर्यात प्रतिबंध एक छोटा कदम लग सकता है, लेकिन यह बड़े भविष्य की नींव बन सकता है। इससे महत्वपूर्ण खनिजों की घरेलू आपूर्ति बढ़ेगी, रीसाइक्लिंग उद्योग को गति मिलेगी और इलेक्ट्रिक वाहन उद्योग को मजबूती मिलेगी। 10 नवंबर की अधिसूचना ने यह स्पष्ट किया है कि सरकार अब कचरे में छिपे संसाधनों का देशहित में उपयोग करना चाहती है। जरूरत है कि इस संपत्ति का वैज्ञानिक तरीके से पुनर्चक्रण हो, आधुनिक तकनीक का इस्तेमाल किया जाए और इसका लाभ देश की अर्थव्यवस्था को मिले। तभी यह काला चूर्ण भारत के उज्ज्वल भविष्य का आधार बन सकेगा।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)